'निर्मला' उपन्यास शास्त्री प्रथम खण्ड
लेखक - मुंशी प्रेमचन्द अनिवार्य द्वितीय-पत्र
राष्ट्रभाषा हिन्दी

प्रश्न:- मुंशी तोताराम के तीनों पुत्रों के चरित्र पर तुलनात्मक दृष्टि डालिए।

उत्तर:- 'निर्मला' उपन्यास मुंशी प्रेमचन्द की एक महत्वपूर्ण सामाजिक रचना है। इसमें यथार्थवाद और आदर्शवाद का सुन्दर समन्वय दिखाई पड़ता है।

वकील मुंशी तोताराम के पहली पत्नी से मंसाराम, जियाराम और सियाराम तीन पुत्र हैं। मुंशी तोताराम निर्मला के साथ दूसरी शादी करके उसे अपने घर लाते हैं। उस समय मंसाराम की आयु सोलह (16) वर्ष की हो चुकी थी जियाराम की आयु बारह वर्ष और सियाराम की आयु सात वर्ष की थी। वृद्धावस्था में मुंशी तोताराम के विवाह के परिणाम स्वरूप उनको अपने तीनों पुत्रों से हाथ धोना पड़ता है। मुंशी तोताराम अपनी पत्नी निर्मला और अपने बड़े बेटे मंसाराम के सम्बन्धों को वे शंका की दृष्टि से देखते हैं। इसलिए मंसाराम को वे आवासीय विद्यालय में भेज देते हैं।

कुछ दिनों के बाद मंसाराम को पता लग जाता है कि पिताजी ने ही मेरे चरित्र पर शंका किया है। इसलिए वह अपने प्राणों की आहुति देकर निर्मला और अपने ऊपर लगे कलंक को हटाता है। मंसाराम कुशाग्र बुद्धि वाला छात्र है। निर्मला का उसके प्रति सहज वात्सल्य भाव है और वह अपनी माता के समान ही सम्मान करता है, परन्तु उसको अपने चरित्र पर लांछन सहन नहीं होता। मंसाराम काफी अस्वस्थ हो जाता है। अस्पताल में निर्मला मंसाराम को बचाने के लिए अपना खून देने के लिए तैयार हो जाती है। डॉक्टर रक्त निकालने की चेष्टा कर ही रहे थे कि

शेष आगे

मंसाराम अपना उज्ज्वल चरित्र की झलक दिखला कर सदा के लिए विदा हो गया।

जियाराम और सियाराम का चरित्र मंसाराम के चरित्र से सर्वथा विपरीत है। वे दोनों इतने उद्दण्ड हो जाते हैं कि मुंशी तोताराम और निर्मला का भी सामना करने को तैयार हो जाते हैं। जियाराम माँ के सन्दूक से आभूषण चोरी करता है और पकड़े जाने पर वह आत्म हत्या कर लेता है। सियाराम घर के व्यवहार से तंग आकर एक ठग साधु के साथ घर से भाग जाता है।

मुंशी तोताराम के तीनों पुत्रों में मंसाराम का चरित्र ही आदर्श चरित्र है। जियाराम और सियाराम का चरित्र उपेक्षित और अनियंत्रित बनकर रह गया है।

डॉ० देव चरण प्रसाद
एसो० प्रो० हिन्दी 07/12/20
रा० उ० सं० महावि० खुखसेना, पूर्णियाँ

निबंध शास्त्री द्वितीय खण्ड
अभिप्राय जि०- पत्र-शब्दभाषा हिन्दी
शीर्षक :- आखिर पढ़ने से होता क्या है
लेखक :- प्रो० केसरी कुमार

प्रश्न :- 'आखिर पढ़ने से होता क्या है' शीर्षक निबंध के आधार पर प्रमाणित कीजिए कि शिक्षा का मतलब जानकारी और चरित्र-निर्माण दोनों ही है।

उत्तर :- नेकेनवादी साहित्यकार प्रो० केसरी कुमार एक उच्च-कोटि के विचारक हैं। ये प्रपद्यवादी थे। प्रपद्यवाद कुछ लेखक एवं कवियों की नई सोच का प्रतिफल था। इसमें रचनाकारों ने अपनी दृष्टि से विषय एवं शिल्प को देखने का संकल्प लिया था। प्रो० केसरी जी इसका नेतृत्व करते थे।

निबंध 'आखिर पढ़ने से होता क्या है' में उन्होंने पढ़ने-लिखने के मूल उद्देश्यों पर मौलिक दृष्टि से प्रकाश डाला है। केसरीजी बड़ी चतुराई से अपनी नन्ही गुड़िया के द्वारा यह सवाल उठवा देते हैं कि 'क' से कबूतर 'ख' से खरहा क्यों होता है। आगे वह यह भी लिखते हैं कि गनीमत है कि इसने 'ई' से ईश्वर और 'उ' से उल्लू नहीं पढ़ा। अन्यथा मास्टर रटी-रटाई भाषा में काफी व्याख्यान देती। एक बार केसरीजी ने आचार्य मनोरंजन जी से मत माँगा। मनोरंजन जी ने लिखा- मैं मतवाला नहीं, मतवाला हूँ। यहाँ शब्द एक है, वर्तनी भी एक है परन्तु अर्थ अनेक निकल रहे हैं।

लेखक का कहना है कि जिज्ञासा आवश्यक है। बिना जिज्ञासा के कुछ भी प्राप्त नहीं होता है। प्रो० केसरी कुमार का कहना है कि किसी विषय को गम्भीरता के साथ पढ़कर उसमें से सटीक अर्थ ढूँढ़ लेना, पढ़ने का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए।

लेखक का कहना है कि पढ़ने में भेद होता है। कोई अक्षर पढ़ता है, कोई शब्द पढ़ता है, और कोई दोनों से

शेष आगे—

अलग भाव पड़ता है। यह भाव ही साहित्य की मूल वस्तु है। अर्थात भाषा का उतना महत्व नहीं होता जितना भाव का होता है।

केसरी जी आगे लिखते हैं लिखने वाला से कहीं ज्यादा पढ़ने वाला विलक्षण होता है। पाठक जब पढ़ता है, तो उसके भीतर सोये हुए भाव जगते रहते हैं। यदि पढ़ाई आदमी को भीतर से उसके रूप का स्मरण न करा दे तो वह पढ़ाई, पढ़ाई नहीं है।

निबंधकार पढ़ाई के साथ-साथ लिखने की अनिवार्यता को भी महत्वपूर्ण मानते हैं। लेखक प्रायः सामाजिक दायित्व, हृदय में उठने वाले विद्रोह आदि के कारण लिखते हैं। वह अपनी प्रत्येक रचना में नये अनुभवों को गम्भीरता से देखने का प्रयास करता है।

केसरी जी कहते हैं पढ़ना केवल अक्षर बोध होना नहीं है। बल्कि पढ़ी हुई वस्तु को प्रेरणा के रूप में अपने जीवन में भी उतारना अनिवार्य है। यदि कोई ऐसा करता है तो उसे पढ़ने का लाभ अवश्य मिलता है।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि केवल किताबी ज्ञान से हम मंजिल तक नहीं पहुँच सकते। ज्ञान कहीं से भी और किसी से भी प्राप्त किया जा सकता है। खेल-कूद भी कोई बुरी चीज नहीं है। शिक्षा का मतलब जानकारी और चरित्र-निर्माण दोनों ही है।

डॉ० देव चरण प्रसाद
एसो० प्रो० हिन्दी
रा० उ० सं० महावि० डुमरसेण्ड, पूर्णियाँ
07/12/20

दिगंत-भाग-2 गद्य खण्ड

शीर्षक :- प्रगति और समाज

लेखक :- नामवर सिंह

उपशास्त्री - अ० दि० पत्र - राष्ट्रभाषा हिन्दी

प्रश्न :- नामवर सिंह जी का जीवनी का वर्णन करते हुए उनकी साहित्यिक विशेषताओं का उल्लेख करें।

उत्तर :- श्री नामवर सिंह का जन्म उत्तर प्रदेश के वाराणसी जिला के अन्तर्गत जीअनपुर नामक ग्राम में 28 जुलाई, 1927 में हुआ था। इनकी माता का नाम वागेश्वरी देवी तथा पिताजी का नाम नागर सिंह था। इन्होंने 1951 ई० में बी० एच० यू० से एम० ए० की परीक्षा पास की एवं 1956 ई० में पी० एच० डी० की उपाधी प्राप्त की।

इन्होंने 1953 ई० में काशी हिन्दु विश्वविद्यालय में अस्थाई व्याख्याता का कार्यभार सम्भाला तथा 1974 ई० में जोधपुर विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष पद पर नियुक्त हुए। इसके अतिरिक्त आगरा विश्वविद्यालय, दिल्ली-विश्वविद्यालय आदि में भी इन्होंने अपनी सेवाएँ दी हैं। सन् 1965 में इन्होंने 'आलोचना' नामक त्रैमासिक पत्रिका का सम्पादन भी किया था। डॉ० नामवर सिंह जब तक जीवित रहे तब तक निरन्तर 'आलोचना' के प्रधान सम्पादक के रूप में अपनी सेवाएँ देते रहे।

डॉ० नामवर सिंह हिन्दी आलोचना के एक शिखर पुरुष हैं। हिन्दी आलोचना के क्षेत्र में अभिनव उत्कर्ष का उभार इनकी साहित्यिक रचनाओं में देखने को मिलती है। हृदय और बुद्धि का आलोचनात्मक तनाव भरा द्वन्द्व उनकी आलोचनात्मक दृष्टि की प्रमुख विशेषता है। डॉ० नामवर सिंह ने हिन्दी साहित्य के अतिरिक्त इतिहास, दर्शन, राजनीति, समाजशास्त्र आदि अनेक विषयों का गहन अध्ययन किया था। डॉ० सिंह को हिन्दी आलोचना को एक नयी सर्जनात्मक भाषा और मुहावरा देने का श्रेय प्राप्त है।

डॉ० नामवर सिंह ने हिन्दी आलोचना को एक

शेष आगे -

नई दिशा देने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। हिन्दी साहित्य के विकास में इनकी रचनाओं को एक आदर्श पैमाना के रूप में विद्वानों ने स्वीकार किया है। इनकी कुछ प्रमुख रचनाओं की चर्चा करना आवश्यक है — हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग, आधुनिक साहित्य की संवृतियाँ, छायावाद, इतिहास और आलोचना, कविता के नए-प्रतिमान, दूसरी परंपरा की खोज, आलोचक के मुख से आदि रचनाओं ने हिन्दी आलोचना के साथ-साथ काव्य में भी इन्होंने एक नयी जीवन-दृष्टि देने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। सन् 1994 में "कविता के नए-प्रतिमान" शीर्षक समीक्षात्मक रचना पर डॉ० सिंह को साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।

आधुनिक हिन्दी आलोचना के क्षेत्र में डॉ० सिंह का बहुमूल्य योगदान रहा है। वे सदैव हिन्दी प्रेमियों के लिए प्रेरणास्रोत का कार्य करते रहेंगे।

डॉ० देवचरण प्रसाद
एसो० प्रो० हिन्दी
श० उ० सं० महावि० सुरवसेना, प्रीर्णियाँ

07/12/20